INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 5, May 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

अरिपन के माध्यम से मिथिला की संस्कृति संरक्षण में महिलाओं का योगदान

डॉ0 गोपाल कुमार
हिंदी अधिकारी, विश्वभारती, शांतिनिकेतन

सारांश

अरिपन मिथिला क्षेत्र की एक महत्वपूर्ण प्राचीन लोकचित्रकला परंपरा है। यह मिथिला की संस्कृति, धार्मिक आस्था तथा सामाजिक जीवन को दर्शाती है। इसमें स्थानीय जीवन-दर्शन और आध्यात्मिक चेतना को ज्यामितीय संरचनाएँ, पौराणिक प्रतीक, प्राकृतिक तत्व तथा देवी-देवताओं से संबंधित चिह्नों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। अरिपन सौंदर्यीकरण के साथ-साथ सांस्कृतिक संप्रेषण का माध्यम भी है, जिसके द्वारा परंपराएँ और पौराणिक अवधारणाएँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ते हैं। पर्व, व्रत आदि विभिन्न शुभ अवसरों एवं संस्कारों के दौरान अंकित सामाजिक संरचना, दांपत्य जीवन की अवधारणा या सामुदायिक मान्यताओं की पुष्टि करते हैं। साथ ही इसमें मिथिला की पारंपरिक जीवनशैली के अभिन्न अंग के रूप में प्रकृति के प्रति सम्मान और पर्यावरणीय संतुलन की भावना भी दृष्टिगोचर होती है। न्यूज 18 बिहार , 24 मार्च, 2025 के अनुसार, "मिथिला में शुभ कार्यों में विशेष प्रकार की कला का उपयोग होता है जिसे अरिपन कहते हैं। इसमें कलाकृति के माध्यम से भगवान को अँकित किया जाता है। पहले केवल जमीन पर बनने वाला यह कला अब कागजों पर भी उपलब्ध है।" ए बी पी लाइव, 23 जनवरी, 2023 के समाचार में मिथिला संस्कृति के अंतर्गत "भारतीय परंपरा में होते हैं विभिन्न प्रकार के 'अरिपन', जानें किन अवसरों पर कैसे अरिपन बनाने का है महत्व" पर प्रकाश डाला। हिंदुस्तान दैनिक पत्र, 13 अगस्त,2025 के अनुसार, "मधुबनी की पांच कलाकारों की टीम स्वतंत्रता दिवस पर राष्ट्रपति भवन में 'अरिपन कला' का प्रदर्शन करेगी।" स्पष्ट है कि अरिपन की लोकप्रियता बहुत बढ़ी है। अरिपन एक जीवंत सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित रखने, अपनी जड़ों से जोड़ने एवं पर्यावरण संरक्षण में बढ़ावा देती है। यह प्राचीन कला मिथिला क्षेत्र की महिलाओं द्वारा संरक्षित है। यह सजावट के साथ-साथ प्रतीकात्मक एवं पीढ़ियों से चली आ रही अनुष्ठानिक अभिव्यक्ति की भाषा है। अत: नई पीढ़ी को इस पारंपरिक कला की और अधिक जानकारी देने की आवश्यकता है। इस शोध-पत्र के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही पारंपरिक ज्ञान पद्धति को अरिपन के माध्यम से प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है। उनके सौंदर्य, जीवन दर्शन एवं पौराणिक परिप्रेक्ष्य का विवेचन करने का प्रयास किया गया है। यह एक अनुष्ठानिक कला है जिसका निर्माण मुख्य रूप से महिलाओं द्वारा किया जाता है। इस कला के माध्यम से मिथिला की महिलाओं की रचनात्मकता, सांस्कृतिक भूमिका और ज्ञान-परंपरा की जानकारी मिलती है। अरिपन मिथिला की सांस्कृतिक निरंतरता और

सामुदायिक चेतना का सशक्त माध्यम है। अतः इसे मिथिला की सांस्कृतिक पहचान और पौराणिक अवधारणा के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए।

बीज शब्द: *अरिपन, मिथिला संस्कृति, लोकचित्रकला, सांस्कृतिक परंपरा, धार्मिक अनुष्ठान, नारी सृजनशीलता, पर्यावरणीय चेतना, सांस्कृतिक विरासत*

परिचय

मिथिला का अरिपन कला

लोक कला के क्षेत्र में मिथिला का विशिष्ट स्थान है। यहाँ की लोक चित्रकला सामान्यतः चार प्रकार की है[1]-

1. भूमि चित्रण, (धूलि चित्र तथा अरिपन)
2. भित्ति चित्र, जो 'मिथिला चित्रकला' अथवा 'मधुबनी चित्रकला' के नाम से लोकप्रिय है।
3. मूर्ति (टेराकोटा तथा अन्य वस्तु की मूर्ति) और गुड़िया
4. विभिन्न कलात्मक तथा उपयोगी वस्तुएँ

भूमि चित्रण को उत्तरी बिहार के मिथिला क्षेत्र में अरिपन तथा भोजपुर में चौक पुरना कहते हैं। मधुबनी, दरभंगा, समस्तीपुर और बेगुसराय – उत्तर बिहार के ये चार जिले ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से मिथिला के अंग रहे हैं।[2] अरिपन कला का सृजन प्रधानतः कुलीन ब्राह्मण तथा कायस्थ परिवार की महिला कलाकारों द्वारा किया जाता है। इसे 'विनोदार्थ कला' भी कहा जा सकता है। यह पीढ़ी-दर- पीढ़ी चली आ रही परंपरागत कला है। मिथिला की महिलाओं को यह कला सांस्कृतिक धरोहर के रूप में मिली है। यह मिथिला क्षेत्र के हर घर में पर्व – त्योहार के अवसर पर अवश्य बनाया जाता है। अरिपन बनाये बिना मिथिला में किसी भी प्रकार के शुभ कार्य आरंभ नहीं किए जाते।

संस्कृत के 'लेपन' शब्द से 'ऐपन' का विकास हुआ है। इसका अर्थ लेपना, पोतना, सफेदी करना, रंग चढ़ाना इत्यादि होता है। ऐपन कला भारत के विभिन्न क्षेत्रों में मिलता – जुलता है। उन्हें अलग-अलग नामों से निम्न प्रकार जाना जाता है[3] -

ऐपन – कुमाऊँ
अल्पना/अल्पोना – बंगाल एवं असम
अरिपन – बिहार एवं उत्तर प्रदेश
चौक पुरना/ सोना रखना – उत्तर प्रदेश

मंदाना – राजस्थान एवं मध्य प्रदेश
रंगोली/सतिया – गुजरात एवं महाराष्ट्र
कोलम – दक्षिण भारत
मुग्गु – आंध्र प्रदेश एवं तेलंगाना
अल्पना – ओडिशा के चित, झोटी एवं मुरुजा
भुग्गल – आंध्र प्रदेश

शोध प्रश्न

अरिपन क्या है एवं मिथिला क्षेत्र की महिलाओं ने इस कला के माध्यम से भारत के ज्ञान परंपरा को किस प्रकार संजो कर रखा है?

शोध का उद्देश्य

अरिपन एक जीवंत सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित रखने, अपनी जड़ों से जोड़ने एवं पर्यावरण संरक्षण में बढ़ावा देती है। यह प्राचीन कला मिथिला क्षेत्र की महिलाओं द्वारा संरक्षित है। यह सजावट के साथ-साथ प्रतीकात्मक एवं पीढ़ियों से चली आ रही अनुष्ठानिक अभिव्यक्ति की भाषा है। इस शोध-पत्र के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही पारंपरिक ज्ञान पद्धति को अरिपन के माध्यम से प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है। उनके सौंदर्य, जीवन दर्शन एवं पौराणिक परिप्रेक्ष्य का विवेचन करने का प्रयास किया गया है। यह एक अनुष्ठानिक कला है जिसका निर्माण मुख्य रूप से महिलाओं द्वारा किया जाता है। इस कला के माध्यम से मिथिला की महिलाओं की रचनात्मकता, सांस्कृतिक भूमिका और ज्ञान-परंपरा की जानकारी को प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है।

शोध – पद्धति

यह शोध पत्र मिथिला क्षेत्र में पीढ़ी – दर – पीढी चली आ रही फर्श चित्रकारी, 'अरिपन' का विस्तृत विश्लेषण करता है। यह एक वर्णनात्मक शोध – पत्र है।

पौराणिक ग्रंथों में अरिपन

'अरिपन' देशज शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ अलि (बोध) 'अंकन' कला है।[4] ब्राह्मण पुराण में अरिपन शब्द के लिए भूमि शोभा शब्द का व्यवहार किया गया है। इसे इस प्रकार दर्शाया गया है -

"विवाहोत्सवयज्ञेषु प्रतिष्ठादिषु कर्मसु।
निर्विघ्नार्थं मुनिश्रेष्ठ तथोद्वेगाद्भु तेषु च॥
वासुदेवकथाभिश्च स्तोत्रैरन्यैश्च वैष्णवै:।
सुभाषितैरिन्द्रजालैर्भूमिशोभाभिरेव च॥"

(ब्र0 पु0 18-12)[5]

इस श्लोक में 'भूमिशोभा' शब्द से इसी अरिपन (आलेपन) का उल्लेख किया गया है।

"लग्नाहे मातृका: पूज्या: पूज्या गौरी हरान्विता।
पीठे वै तदलाभे तु सुश्लक्षणे तण्डुलान्विते॥
पंकजं कार्यित्वा तु तत्र गौरीहरौ यजेत्॥"

(भट्टगोपीनाथकृत संस्काररत्नमाला)[6]

इसमें 'सुश्लक्ष्ण', 'तण्डुलान्वित' इन दोनों पदों से चावल-पिष्टक को घोलकर उसका अरिपन (आलेपन) करना साफ कहा गया है।

कोजागरा के अवसर पर कैसा अरिपन (आलेपन या मण्डल) लिखना चाहिए – इस संबंध में लक्ष्मीपूजा पद्धति में लिखा है –

"मण्डलानि विचित्राणि नानापिष्टै: कृताणि च।"[7]

देवोत्थान (प्रबोधिनी) एकादशी के संबंध में महामहोपाध्याय चण्डेश्वर कहते हैं –

"वासुदेवकथाभिश्च स्तोत्रैरन्यैश्च वैष्णवै:।
सुभाषितैरिंद्रजालैर्भूमिशोभाभिरेव च॥"[8]
इसमें 'भूमिशोभा' से अरिपन का ही अर्थ ग्रहण किया गया है।

श्रीहर्षरचित नैषधीयचरित महाकाव्य में भी अरिपन का उल्लेख आया है –

"धृतलांछनगोमयाच्चनं विधुमालेपनपाण्डरं विधि:।
भ्रमय्त्युचितं विदर्भजाऽऽननीराजवर्द्धमानकम्॥"

(नै0 च0 2 स0, 26 श्लोक)[9]

इस प्रकार अरिपन का उल्लेख अनेक ग्रंथों में हुआ है। काफी समय तक 'आलेपन' संस्कृत का 'आलिंपन' या 'अलिपन' मैथिली भाषा में व्यवहृत हो रहा था। आगे चलकर 'अरिपन', 'अडिपन', 'ऐपन' इत्यादि उसके पर्याय शब्द मिथिला के प्रांत भेद से भिन्न-भिन्न रूप में व्यवहृत होने लगे। श्री त्रिलोकीनाथ मिश्र (झा, 21) के अनुसार अरिपन लिखने की परंपरा संस्कृत के मौलिक ग्रंथों के आश्रित होने से मिथिला की एक प्रकार की विलक्षण

संस्कृति है। वे यह भी मानते हैं कि स्वस्तिक, आलेपन, सर्वतोभद्र, मण्डल आदि शब्दों से कहे जानेवाले इस अरिपन की परिपाटी का मूल आधार मिथिला ही है ।

वैदिक युग में केवल सर्वतोभद्र आदि मण्डलों पर ही गार्हस्थ्य मांगलिक कार्य किये जाते थे। तांत्रिक युग आने पर गर देवतात्मक यंत्रस्वरूप अरिपन लिखने की परिपाटी लगभग पूरे भारत में है। हरिद्रा, कुंकुम- केसर आदि के साथ, सिंदूर – बिंदुओं और श्वेत-बिंदुओं के साथ बिहार, उसमें भी मिथिला में ही है।

'अरिपन' का संक्षिप्त इतिहास

श्री त्रिलोकीनाथ मिश्र "मिथिला की सांस्कृतिक लोकचित्रकला" के प्राक्कथन (झा, 17) में लिखते हैं कि इतिहास - पुराणों में सुप्रसिद्ध चौंसठ कलाओं में से आलेपन (आलिम्पन), मिथिला में अरिपन भी एक कला का स्वरूप माना जाता है, जिसे चित्रकला अथवा शिल्पकला कह सकते हैं। उनके अनुसार यह अरिपन, गृह्यसूत्रों, शास्त्रों तथा निबंधों में 'मण्डल' शब्द से प्रसिद्ध है। उन्होंने कर्मकांड के शुभकर्मों में 'सर्वतोभद्र', 'स्वस्तिक', 'षोडशदल', 'अष्टदल' आदि को इसी का प्रभेद कहा है।

अरिपन का अंकन पूजा, व्रत, संस्कार जैसे यज्ञोपवीत, मुंडन, विवाह आदि अवसरों पर होता है। हर अवसर पर आँगन में दरवाजे के सामने एवं अन्य जगहों पर इसका सुंदर तथा विस्तृत रेखांकन होता है। श्री लक्ष्मीनाथ झा ने 'मिथिला की सांस्कृतिक लोककला' में 18 प्रकार के अरिपन का उल्लेख किया है। वे हैं – तुसारी पूजा का अरिपन, पृथिवी अरिपन, साँझ अरिपन, कल्याणदेई पूजा का अरिपन, उबटन लगाने का अरिपन, स्त्रियों का दशपात अरिपन, मौहक अरिपन, षष्ठी पूजा का अरिपन, मधुश्रावणी पूजा का अरिपन, पुरुषों का दशपात अरिपन, द्वादशाह का अरिपन, गवहा संक्रांति का अरिपन, कोजागर का अरिपन, सुखरात्रि का अरिपन, चतु:शंख अरिपन, षड्दल अरिपन, अष्टदल अरिपन तथा स्वस्तिक अरिपन।

अरिपन के माध्यम से मिथिला के महिलाओं का योगदान

भारत में भूमि अलंकरण की प्रथा वैदिक काल से ही चली आ रही है। ब्राह्मण कर्मकांड और आगे चलकर तंत्र साधना में भी भूमि चित्रण का प्रयोग हुआ है। मिथिला में भूमि चित्रण (अरिपन) की परंपरा बहुत प्रचलित है। मिथिला में संस्कार-उत्सवों तथा त्योहारों पर भूमि अलंकरण का चलन है। है। इस क्षेत्र में इसे अरिपन या अश्विन कहा जाता है।

अरिपन का अंकन पूजा, व्रत, संस्कार जैसे मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह आदि अवसरों पर देखा जा सकता है। प्रत्येक अवसर पर आँगन में दरवाजे के सामने तथा अन्य स्थान पर इसे सुंदर एवं विस्तृत तरीके से रेखांकित किया जाता है। यह कार्य प्राय: महिलाएँ या अविवाहित कन्याएँ करती हैं। भूमि अलंकरण में भूमि को गोबर से लीपकर उसे चित्रांकन के लिए तैयार किया जाता है। भींगे अरवा चावल को पीसकर 'पीठार' बनाया जाता है। इसे रंगीन बनाने के लिए इसमें रंग भी मिलाया जाता है। सादा या रंगीन पीठार से तैयार की गयी भूमि पर अंगुलियों से चित्र बनाया जाता है। शास्त्रों में इन्हें 'आलेपन' कहा गया है।[10] लक्ष्मीनाथ झा (1) जी आगे लिखते हैं कि पहले यहाँ की स्त्रियाँ रंगों का निर्माण स्वयं करती थीं। जौ को जलाकर या चिराग के धुएँ से बनी कजली में बेल का लस्सा और गोबर मिलाकर काला रंग, चूना में बरगद के पत्ते का दूध मिलाकर पीला रंग, पलास-फूल के पराग से नारंगी रंग, कुसुम के रस से लाल रंग तथा विल्वपत्र या सोम के पत्ते से हरे रंग का निर्माण करती थीं। मांगलिक अवसरों पर पारंपरिक रूप से निर्धारित अरिपन ही बनाया जाता है। अवसर विशेष पर तैयार किए जानेवाले अरिपन में बहुत कुछ मार्मिकता एवं भाव निहित हैं। डॉ0 रीता शर्मा (85) के अनुसार मिथिला के जन-जीवन पर तंत्र का अत्यधिक प्रभाव रहा है। यहाँ के लोगों का जीवन तांत्रिक सिद्धांत से ही संचालित और नियंत्रित होता है। मिथिला में बालक को प्रथम बार सरस्वती की प्रशस्ति – भूमि चित्रण के माध्यम से अरिपन के द्वारा कराया जाता है। मिथिला के धार्मिक जीवन में शक्ति की प्रधानता धर्म के प्रति है जिसका संबंध विभिन्न प्रकार के अरिपन से है। लक्ष्मीनाथ झा (1-2) जी के अनुसार, वैदिक-काल अथवा रामायण-काल से चली आ रही मिथिला की यह लोक चित्रकला लुप्त हो रही है। कुछ कुलीन स्त्रियों के माध्यम से यह जीवित है जो पर्व एवं वैदिक संस्कारों के अवसर पर देखी जाती है। विशेष रूप से श्रोत्रिय तथा पंजीबद्ध वर्गों की महिलाएँ इन चित्रों को बहुत महत्व देती हैं और इनके बिना कोई भी पर्व या वैदिक संस्कार संपन्न नहीं होने देती हैं।

मैथिल शैली के चित्र केवल भूमि को सजाने के लिए ही नहीं बनाए जाते। ये सब पुराण एवं शास्त्रों के गूढ़ तत्त्वों पर आधारित हैं। इनकी रेखाओं, बिंदु तथा रंग का कोई-न-कोई विशेष तात्पर्य होता है। संक्षेप में कुछ अरिपन को इस प्रकार समझा जा सकता है -

चित्र स्रोत : लक्ष्मीनाथ झा की 'मिथिला की सांस्कृतिक चित्रकला'

तुसारी पूजा माघ मकर संक्रांति से कुम्भ फाल्गुन संक्रांति तक पूरे एक माह का कल्प बनाकर किया जाता है। यह सुबह में काग की बोली सुनने से पहले समाप्त की जाती है। पूजा हेतु कुमारी कन्याएँ चार बजे सुबह ही नित्य क्रिया से निवृत्त हो जाती है। सुबह आँगन में घूमकर वायु सेवन करने से शरीर स्वस्थ रहता है। आलस्य भगाने एवं विवाहोपरांत पति से पहले उठकर गृहस्थी के कार्यों में लगकर पति-सेवा धर्म निभाने की शिक्षा दी जाती है। अत: यह पूजा विशेष रूप से कुमारी कन्याओं को आदर्श पातिव्रत धर्मपालन के लिए तैयार करने के लिए की जाती है। इस अवसर पर बनाये जानेवाले अरिपन के माध्यम से सांकेतिक रूप से ब्रह्मा, विष्णु, महेश को क्रमश: सत्त्वगुण, रजोगुण व तमोगुण के द्योतक के रूप में दर्शाया जाता है। मंदिर के गुंबज के रूप में तीन पत्तियों वाले कमल के माध्यम से क्रमश: प्रात:, मध्याह्न व संध्या के द्योतक के रूप में दर्शाया जाता है। पीले अरिपन में गुंबज के रूप तीन पद्म-पंखुड़ियों के नीचे मंदिर के मुंडेरे की जगह के बीच पाँच त्रिकोण क्रमश: पृथ्वी, जल, वायु, आकाश तथा अग्नि पाँच तत्त्वों के प्रतीक हैं। तीनों अरिपन चित्र मंदिरों में देवता की जगह भगवती गौरी का यंत्र लिखा जाता है। 'रस राजसुंदरं' (झा, 5) के अनुसार श्वेत चित्र ब्राह्मण, पीला चित्र वैश्य तथा लाल चित्र क्षत्रिय वर्ण को दर्शाता है। पीला चित्र हल्दी से बनाया जाता है जिसमें अनेक रासायनिक गुण होते हैं एवं पवित्र कार्य के अवसर पर प्रयुक्त होता है। लाल चित्र सिंदूर से बनाया जाता है जिसका प्रयोग सदा सुहागन रहने की कामना से किया जाता है।

पृथिवी पूजा किसी वर्ष के माघ की मकर संक्रांति से दूसरे वर्ष के माघ की मकर संक्रांति पर्यंत पूरे एक वर्ष का कल्प बना विवाह हो जाने के बाद यहाँ के स्त्रियों के द्वारा इस

कामना से पूजी जाती है कि पृथ्वी माता जानकी जी की तरह उन्हें भी पतिव्रता, धर्मपरायण एवं कर्तव्यनिष्ठ बनावें। पृथिवी अरिपन चित्र त्रिकोणकार होता है। यह पृथ्वी रूपी मातृ शक्ति का बोधक है। त्रिकोण यंत्र सृष्टि का आधार माना जाता है। इसके ऊपर सृष्टि के रूप हिम-कणों की तरह बिंदु दिए गए हैं। यह पूजा पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि तथा आकाशरूपी पंचतत्त्व, जिनसे कि सृष्टि का निर्माण है, के प्रतीक चंदन, जल, धूप, दीप तथा पुष्प आदि पूजा की सामग्रियों के द्वारा उद्योत्तर की जाती है।

'साँझ अरिपन' संध्या देवी की पूजा के समय मिथिला में स्त्रियों के द्वारा लिखे जाने की परिपाटी चली आ रही है। यह पूजा संध्या समय सुहागिन करती है। इसमें वे प्रार्थना करती हैं कि संध्या देवी उनके पति-मिलन को सुखकर बनावे जिससे प्रसन्नतापूर्वक दाम्पत्य जीवन व्यतीत हो और गृहस्थाश्रम के संतान रूपी फल को प्राप्त कर सकें। साँझ अरिपन में ब्रह्माण्ड रूपी मंदिर का चित्र बनाया जाता है। इसमें त्रिगुण रूपी तीन रेखाओं से घिरे त्रिमूर्ति के द्योतक मंदिर के तीन गुंबजों का रूप दिया जाता है। आकाश और नक्षत्र को दर्शाने के लिए दीपमाला रूपी बिंदु दिए जाते हैं। मंदिर के ऊपरी भाग में शिव और शक्ति के प्रतीक दो रेखाएँ दी जाती है। उसके नीचे की पट्टी में सूर्य, गणपति, अग्नि, दुर्गा और रुद्ररूपी पंच देवों के द्योतक पाँच त्रिकोण दिए जाते हैं। रवि, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन नौ ग्रहों के प्रतीक स्वरूप नौ शून्याकार गोल पुष्प सजाए जाते हैं। इनके आधार , आकाश के रूप, मुंडेरे की नीचेवाली रेखा के रूप में दी जाती है। इस तरह आकाश में मंदिर के ऊपरी भाग का निर्माण किया जाता है। छः ऋतुओं के प्रतीक के रूप में छः लम्बाकार रेखाएँ मंदिर के आधार की जगह प्रातः, मध्याह्न और संध्यारूपी काल के प्रतीक तीन रेखाओं पर अवलंबित होती हैं। इसके बीच सफेद व लाल शून्याकार पुष्परूपी बिंदु दिन और रात के प्रतीक होते हैं। छोटी-छोटी पंद्रह रेखाएँ पक्ष के प्रतीक होते हैं। मंदिर के नीचे भाग में अर्थ, धर्म, काम, मोक्षरूपी चार वर्णाश्रमधर्मों के रूप तीन-तीन रेखाओं से घिरी मंदिर की चार सीढ़ियाँ बनायी जाती है। इस विश्वरूपी मंदिर के गुंबजों से नीचे चारों तरफ के दीपों के स्थान बिंदु विश्व की सृष्टि के स्वरूप दिए जाते हैं।

कल्याण कारिका देवी तथा ग्रहों की पूजा को मिथिला में 'कल्याणदेई पूजा' कहते हैं। इस अरिपन के जरिए तीनों लोक, पंच तत्त्व तथा पंच देव, त्रिशक्ति, त्रिगुण, वर्णाश्रम, शरीर की शैशव और जरा अवस्थाओं, सप्त सिंधु तथा नव ग्रहों को प्रतीक के रूप में दर्शाए जाते हैं।

उबटन सरसों के तेल, जौ के आटे तथा अन्य कई पदार्थों को मिलाकर बनाया जाता है। इससे मालिश कर शरीर को स्वच्छ तथा पवित्र किया जाता है। इसे यहाँ 'आंग उंगारब' कहते हैं। यह कार्य 'सबरंग पटिया' पर बैठकर किया जाता है। उबटन लगाने का अरिपन 'षट पाइस' नाम से प्रसिद्ध है। यह एक 'रक्षा यंत्र' के रूप में माना जाता है। इसका उद्देश्य नजर लगाने तथा घातक मंत्र के प्रयोग से बचाना है। यह अरिपन प्रकृति और पुरुष रूपी दो रेखाओं से चारो तरफ से घिरा रहता है। यह 18 पुराणों के प्रतीक 18 समचतुष्कोण क्षेत्र से युक्त होता है। प्रत्येक क्षेत्र में चार वेदों के प्रतीक चार पंक्तियों में पुष्प दर्शाए जाते हैं। बीच में सिंदूर रक्त बिंदु स्वरुप दिया जाता है। यह चित्र भी पीठार से ही केवल अंगुलियों द्वारा लिखा जाता है। यह अरिपन अन्य सांस्कृतिक अवसरों पर भी बनाया जाता है।

मिथिला में कन्याओं के मुण्डन, कर्णवेध, विवाह आदि सांस्कृतिक संस्कारों के अवसर पर कन्याओं द्वारा 'स्त्री गणक दशपात अरिपन' का निर्माण किया जाता है। इसमें पंचदेव, सप्तर्षि, पृथ्वी एवं तारारूपी नक्षत्र, शास्त्रीय चार वर्णाश्रम धर्म, सृष्टि में प्राण, एवं गर्भाशय को प्रतीक के रूप में दर्शाया जाता है। जन्म, कर्म एवं मरण को तीन रेखाओं से घेरकर मृत्यु की निश्चितता को दर्शाया जाता है। इसलिए जन्म ग्रहण कर अच्छे कर्म करना शास्त्रों में आवश्यक माना गया है। दश डालियों से युक्त दश गोलाकार पत्तों के चित्र स्त्रियों के दशकर्मों को दर्शाते हैं। यह अरिपन स्त्रियों को उनके कर्त्तव्य तथा स्त्री-धर्म का पालन याद दिलाने एवं मिथिला की संस्कृति को संजोकर रखने हेतु प्रेरित करने के लिए बनाया जाता है।

चित्र स्रोत : लक्ष्मीनाथ झा की ‘मिथिला की सांस्कृतिक चित्रकला’

मौहक अरिपन में वर, वधू, मानव के कर्त्तव्य के रूप चार आश्रम, संतानरूपी सृष्टि तथा प्रेम-सूत्र को प्रतीक के रूप में दर्शाया जाता है। इसके माध्यम से वर और वधू के दो हृदयों को प्रेम रूपी सूत्र में जोड़कर चारों आश्रमों की शिक्षा-कर्त्तव्य बताते हुए एवं संतानरूपी सृष्टि का ज्ञान कराते हुए एकाकार किया जाता है।

मिथिला में षष्टी देवी की पूजा या ‘षष्टिका पूजा’ किसी कन्या के पहली बार ऋतुमती होने के चौथे दिन की जाती है। इस अवसर पर बनाए जानेवाले अरिपन में सृष्टि और संहार, दिन और रात, पुरुष और प्रकृति आदि सांकेतिक रूप से दर्शाए जाते हैं। यह अरिपन प्रकृतिरूपा स्त्री की सृष्टि को धारण करनेवाले, गर्भाशय तथा दीपदान की तरह वासना की लौ से युक्त सृष्टि और संहार का प्रतीक बनाया जाता है। इसमें दिन तथा रात का बोध कराने के लिए दीपदान की ऊपरवाली कोर के संग नीचे की गहराई के रूप में चारो तरफ दो रेखाएं दी जाती है। इन रेखाओं के ऊपर महीने में 30 दिन तथा रात के बोधक गर्भाशय को कमल की पत्तियों के रूप में चारो तरफ 30 खाढ़ियाँ बनायी जाती है। पत्तियों के ऊपर दिन या रात में 30 दंडों के बोधक या परागरूपी रज के कणों के द्योतक प्रकाश के रूप में 30 बिंदु दिए जाते हैं। दीपदान की दोनों रेखाओं के भीतर एक दंड में 60 पलों के बोधक षष्टी देवी के यंत्र के प्रतीक 60 कमल के फूल बनाए जाते हैं। इसके ऊपर चारों तरफ के 60 शून्याकार बिंदु प्रकाश कणों के रूप अथवा 1 पल में 60 विपल के बोधक या सृष्टि के बीज के द्योतक अथवा शुक्र के बिंदु के प्रतीक बनाए जाते हैं।

अरिपन के निचले भाग में काम रूपी वायु से प्रेरित स्त्री रूपी दीप की वासना रूपी शिखा के बोधक प्रतिपल अग्नि के प्रकाश की तरह आगे की ओर बढ़ने वाली उत्तेजना के द्योतक सृष्टि अथवा संहार का बोधक 1 मास का प्रतीक दीप का एक लौ कमल की डंठल के रूप में बनाया जाता है। अत: यह अरिपन समय की गणना अर्थात् 60 विपल का 1 पल, 60 पल का 1 दंड, 60 दंड का एक दिन और रात एवं 30 दिन तथा रात को एक मास के बोधक के रूप में बनाया जाता है। षष्टी पूजा कन्याओं को उनके अंदर प्रकृति प्रदत्त शक्तियों का ज्ञान कराने के उद्देश्य से की जाती है ताकि अबोध बालिकाएँ स्त्रीत्व की शक्ति का दुरुपयोग न करें और संहार-शक्ति का प्रयोग सिर्फ स्त्रीत्व की रक्षा या पातिव्रत धर्म पालन के लिए ही करें।

मधुश्रावणी श्रावण कृष्ण पंचमी से प्रारंभ होकर श्रावण शुक्ल तृतीया तक चलती है। इसे नव विवाहित वर-वधुओं के लिए प्रसिद्ध त्योहार माना जाता है। इस पूजा के दौरान वयोवृद्ध महिला नव विवाहित वधू को सतीधर्म पालन सिखाती है। इस अवसर पर यह अरिपन को मैना के दो पत्ते तथा पूजा करनेवाली के दोनों तरफ भूमि पर लिखे जाते हैं। दोनों तरफ भूमि पर लिखे गए आलेपन पर ही यह पत्ता भी रखा जाता है। मधुश्रावणी पूजा के अवसर पर सूर्य, चंद्र, गौर, साठि तथा नवग्रह का चित्र सृष्टि के प्रभावशाली नक्षत्रों को संतुष्ट कर पूजा के समय आनेवाली विघ्न-बाधाओं को दूर करने के उद्देश्य से लिखा जाता है। ये पाँच बिंदु पंच तत्त्व के प्रतीक हैं जिनसे मानव शरीर निर्मित होता है।

मिथिला में पुरुषों के प्रत्येक सांस्कृतिक संस्कार के अवसर पर 'पुरुषक दशपात अरिपन' लिखा जाता है। यह मनुष्य को अपने कर्त्तव्य का ध्यान रखते हुए अपने कर्म क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। शास्त्रीय दशकर्मों के बोधक होने के कारण ही इसे 'दश पात' कहा जाता है। इस अरिपन में त्रिकाल प्रात:, मध्याह्न, संध्या को तीनों लोकों के प्रतीक के रूप में दर्शाया जाता है। बारह मछलियों के चित्र बारह राशियों को दर्शाते हैं। ध्यातव्य है कि मिथिला में किसी भी सांस्कृतिक कार्य का आरंभ राशि, नक्षत्र को ध्यान में रखते हुए ज्योतिष शास्त्र के द्वारा शुभ विचार करके ही किया जाता है।

मिथिला में किसी की मृत्यु के पश्चात् कुलदेवता के घर के आगे दक्षिण की तरफ द्वादशाह अरिपन का निर्माण किया जाता है। यह बायें हाथ से केवल एक अंगुली के सहारे ही लिखा जाता है। इसमें बिंदु तथा सिंदूर नहीं लगाया जाता। यह सृष्टि को धारण करनेवाली पृथ्वी की तरह गोलाकार वृत्त के रूप में बनाया जाता है जो शून्य का बोध कराता है। महर्षियों तथा विद्वानों के अनुसार मनुष्य पृथ्वी पर पैदा होकर पुन: उसी में मिल जाता है। इस अरिपन के माध्यम से इस दर्शन को समझाया जाता है।

कार्तिक महीने की तुला राशि की संक्रांति का दिन मिथिला में 'गवहा संक्रांति' के रूप में जाना जाता है। इस अवसर पर लंबाकार चित्र कुलदेवता के घर के बरामदे की सीढ़ी के नजदीक से लेकर कुलदेवता (गोसाउनि) के पीठ तक बनाया जाता है। यह शास्त्रानुसार अनेक तीर्थस्थानों की मिट्टी को इकट्ठा कर शास्त्रीय वचन के अनुसार विधिपूर्वक बनाया जाता है। यह अरिपन देवता के घर आने के समय अगवानी के रूप में सूर्योदय से पूर्व लिखा जाता है और ध्यान रखा जाता है कि गोसाउनि घर होने के समय तक कोई इसे लाँघने न पाए। यह मेहमानरूपी भगवान को सम्मानपूर्वक अगवानी करके घर लाने का प्रतीक है। तुलसीकृत एवं वाल्मीकि रामायण के अनुसार अयोध्या के राजा भरत ने अपने भाई रामचंद्र को अयोध्या नगरी की सीमा से ही अगवानी की थी।[11] इस अरिपन के माध्यम से यह शिक्षा देने की कोशिश की जाती है कि मनुष्य को घमंडी नहीं होना चाहिए। उन्हें धर्म पर आरूढ़ रहकर सत्य एवं दान रूपी कर्त्तव्य पर दृढ रहना चाहिए। इससे भक्ति की भावना जगेगी एवं भगवान के संग तीनों लोक स्वयं आज्ञाकारी दास बन जाएँगे और उसकी सभी कामनाएँ सिद्ध होगी। इस अवसर पर कुमारियों द्वारा गोबर के कण्डे बनवाने का प्रावधान है ताकि गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने पर उन्हें निम्न तथा घृणित कार्य करने में संकोच न हो। गृहस्थजीवन में स्त्रियों को कई ऐसे कार्य करने पड़ते हैं जिससे मनुष्य स्वभावत: घृणा करता है; यथा, गोबर को मथ कर कण्डे बनाना, बच्चों के मल-मूत्र धोना आदि। शिक्षा देने हेतु मैथिल संस्कृति में कन्याओं से ऐसे कार्य करवाए जाते हैं जो उनके गृहस्थ जीवन में सहायक हो।

कोजागर पर्व शास्त्र के 'कोजागर्ति मही तले' इस पंक्ति के अनुसार ही मिथिला में आश्विनी पूर्णिमा की रात्रि को मनाया जाता है। इस अवसर पर गोसाउनि घर की सीढ़ी के नजदीक से गोसाउनि की पीठ तक लंबाकार अरिपन चित्र लिखे जाते हैं। इस अरिपन पर होकर देवता के घर में प्रवेश करने की भावना निहित है। अत: इस चित्र के सबसे नीचेवाले कमल के बीच दो पद चिह्न प्रवेश के समय और उसके बाद का एक-एक पद चिह्न आगे घर की ओर बढ़ने के भाव से दिया जाता है। पीठ के पास ऊपरवाले कमल पर रुकने के भाव से दो पद चिह्न बनाए जाते हैं। इसके पश्चात् अष्टदल पर जा साधक की ओर घूम कर खड़े होने की भावना से दोनों पद नीचे की ओर घूमे चित्रित किया जाता है। इस चित्र में महारात्रि, कालरात्रि और मोह-रात्रि का प्रतीक अथवा रज, सत्त्व तथा तम तीन गुणों से युक्त मखानों के पत्तों के रूप बनाए जाते हैं। इस प्रकार इस अरिपन के माध्यम से भी मिथिला में प्रचलित अगवानी में स्वागत की प्रथा को दर्शाते हुए धन की देवी लक्ष्मी को प्रसन्न कर अनेक प्रकार के सुखों की कामना की जाती है।

दीवाली पूजा के अवसर पर 'सुख रात्रिक अरिपन' लिखा जाता है। भारत का यह त्योहार कार्तिक की अमावस्या की रात्रि को मनाया जाता है। इसे कालरात्रि के रूप में मानते हैं। उस रात असंख्य निरीह कीटाणु दीप शिखाओं की प्रकाश की चमक पर आकर्षित होकर अपने प्राण गँवाते हैं। वे नहीं जानते कि प्रकाशरूपी चमक उनके लिए काल बनकर आई है। इसके माध्यम से धन के चकाचौंध में पड़कर स्त्रियों को अपना सतीत्व नष्ट करने से बचने की शिक्षा दी जाती है। इसी दिन प्रदोष समय से पूर्व यह अरिपन बरामदे की सीढ़ी से पूजा की जगह तक और वहाँ से कुलदेवता की पीठ तक लिखा जाता है। इसमें भी देवता के स्वागत में अगवानी की भावना निहित है। इस अरिपन में सभी शक्तियों के एकाकार रूप भगवती कालरात्रि के तंत्र में वर्णन किए गए वाम मार्ग से उनके साधनों के प्रतीक रूपी रेखाओं तथा बिंदुओं की पूजा की जाती है। यह वैदिक शास्त्रों में भी ब्राह्मण के अतिरिक्त वर्णों के लिए विहित दिया हुआ है। अत: प्रत्येक वर्ग के निमित्त आदि शक्ति रूपी परमेश्वरी की आराधना का मार्ग उस वर्ण के मनोनुकूल पूजा विधियों द्वारा किया जाता है। इसी दृष्टि से वर्ण-व्यवस्था की गई थी जिससे मनुष्य का जीवन सुव्यवस्थित बीते।

देवोत्थान एकादशी की पूजा पद्मपुराण में वर्णन की गई कथा के आधार पर की जाती है। इस पूजा के अवसर पर मिथिला में स्त्रियों के द्वारा चतु:शंख अरिपन लिखी जाती है। इस चित्र के चारों कोने पर चार शंखों के चित्रित होने के कारण इसे चतु:शंख अरिपन कहा जाता है। ये चार शंख चारों वेदों को के प्रतीक हैं। इस अरिपन के साथ गृहस्थाश्रम में काम आनेवाली सभी चीजों के चित्र बनाए जाते हैं जो सृष्टि के पालन के लिए आवश्यक है। यह दर्शाता है कि सृष्टिकर्त्ता ने सृष्टि की रक्षा के लिए हर तरह का इंतजाम किया हुआ है। इसे कोई अपनी इच्छानुसार नहीं बदल सकता। इसे मिथिला में अदृष्ट कहा जाता है। इसी के अनुसार मिथिला में गृहस्थाश्रम निर्माण हेतु वधुरूप में वरण करने के लिए वर ही कन्या के घर जाते हैं। गृहस्थाश्रम में काम आनेवाले सभी चित्रों के नीचे हल से युक्त हलवाहे का चित्र दिया जाता है। यह प्रतीक है कि गृहस्थाश्रम रूपी संसार की सृष्टि कृषकों पर निर्भर है। इस अवसर पर बेकार वस्तुओं को बाहर फेंक दिया जाता है। इस अरिपन के माध्यम से स्वास्थ्य एवं कृषि के महत्व को समझाते हुए आगंतुकों को सम्मान देना सिखाया जाता है।

षड्दल अरिपन मिथिला में अत्यंत गोपनीय और श्रद्धेय कुलदेवता के पीठ पर विशिष्ट दिनों में लिखी जाती है। 'इस चित्र के मध्य छ: पद्मपत्रों के बीच आदि शक्ति भुवनेश्वरी का, षट्कोण यंत्र लिखा जाता है इसलिए इसे षड्दल अरिपन कहा जाता है। इसका वर्णन 'देवीभागवत पुराण' के तृतीय स्कंध के तृतीय अध्याय में आया है।'[12] यह यंत्र तंत्र शास्त्र

में वर्णित शक्ति के अधोमुख त्रिकोण यंत्र के ऊपर शिव का ऊर्ध्वमुख त्रिकोण यंत्र लिखकर बनाया जाता है। ये षड्दर्शन के प्रतीक भी माने जाते हैं। इसके चारों ओर बायें से मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, स्तंभन एवं आकर्षण रूपी षट् कर्मों के प्रतीक, षड् ऋतुओं के बोधक भगवती के छ: शस्त्रों के रूप त्रिशूल, पद्म, चंद्र, शंख, वज्र तथा पाश का चित्र दिया जाता है। यह अरिपन पौराणिक विषयों से युक्त मनुष्य के अदृष्ट को बनाने वाले कर्म का बोधक बनाया जाता है। इसके माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्म पर विश्वास कर कर्त्तव्य करने के लिए कहा जाता है।

अष्टदल अरिपन, मिथिला में महिलाओं के द्‌वारा, प्रधानतया भगवान, तथा भगवती की पूजा के अवसर पर भी बनायी जाती है। यह गोबर से लिपी भूमि या लकड़ी की चौंकी तथा पीढ़िया पर लिखी जाती है। यह यंत्र के रूप में कमल फूल की आठ पत्तियों के बीच बनाया जाता है। इसी कारण से इसे 'अष्टदल अरिपन' कहा जाता है। इस चित्र के माध्यम से भगवान के भिन्न-भिन्न रूपों को व्याप्त दिखाया जाता है एवं भगवान की पूजा के साधनों से ही समस्त पृथ्वी ढकी दिखाई जाती है। इस अरिपन के माध्यम से प्रकृति रूपी भगवती तथा पुरुष रूपी भगवान की एक ही सम्मिलित शक्ति 'परब्रह्म परमात्मा' के रूप को सिद्‌ध किया जाता है जिसे परम शिव भी कहा जाता है। यह अरिपन पुराणों में वर्णित उपाख्यानों से युक्त बनाया जाता है।

'स्वस्तिक अरिपन मिथिला में 'स्वस्ति अरिपन' के नाम से लोकप्रिय है। यह 41 स्वस्तिकों को आपस में जोड़कर बनाया जाता है। 'स्वस्ति' का शब्दिक अर्थ 'आशीष' होता है। अत: स्वस्ति अरिपन आशीर्वाद बोधक चित्र है। इसके शुभप्रद होने की ख्याति समस्त भूमंडल में व्याप्त है।'[13] यह अरिपन 'कार्तिक माहातम्य' में वर्णित कार्तिक महीने की तुलसी-पूजा या शारदीय दुर्गापूजा के अवसर पर तुलसी के पौधे के नजदीक या दुर्गा मंदिर में महारात्रिरूपी महाष्टमी के दिन पीठार से लिखा जाता है। तुलसी में अनेक आयुर्वेदिक गुण हैं। मिथिलावासी के प्रत्येक आँगन में तुलसी का पौधा 'गरुड़ पुराण' के निम्नलिखित श्लोक के अनुसार लगाने की प्रथा चली आ रही है –

"तुलसी रोपिता सिक्ता दृष्टा स्पृष्टा च पावयेत्।
आराधिता प्रयत्नेन सर्व – काम – फल – प्रदा॥"[14]

यह चित्र वैदिक यज्ञों में 'सर्वतोभद्र' माना जाता है। इसे यज्ञवेदी के बीच बने 'स्थंडिल' रूपी चबूतरे पर लिखने की परिपाटी वैदिक काल से ही चली आ रही है। इस अरिपन के 41 स्वस्तिकों के बीच 41 लाल सिंदूर के बिंदु दिए जाते हैं। इन बिंदुओं को तरह-तरह की रेखाओं के रूप में मानकर परिणत करने से तंत्र-शास्त्र में वर्णित प्राय:

सभी यंत्रों का निर्माण हो सकता है। यह अरिपन संहारशक्ति रुद्र के बोधक के रूप में बनाया जाता है।

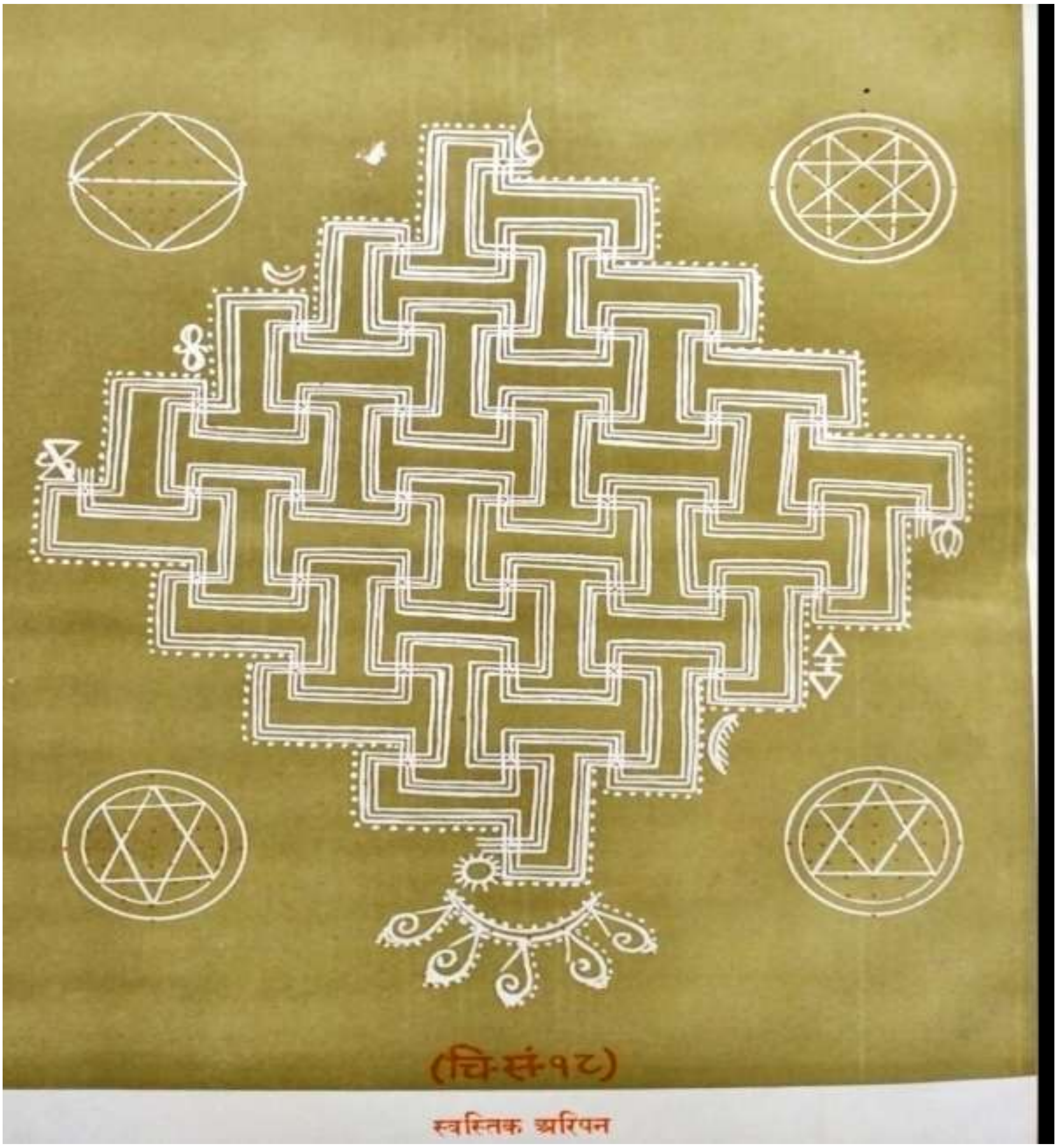

चित्र स्रोत : लक्ष्मीनाथ झा की 'मिथिला की सांस्कृतिक चित्रकला'

निष्कर्ष

मैथिल शैली के चित्र केवल सजावट के लिए नहीं बनाए जाते। वे सब पुराण एवं शास्त्रों के गूढ़ तत्त्वों पर आधारित हैं। इनकी रेखाएँ, बिंदु तथा रंग कोई-न-कोई विशेष तात्पर्य रखते हैं। मिथिला के लोकचित्र संकेतों के कलात्मक वाहन हैं। ये संकेत स्थूल जीवन की क्रियाकलापों और पदार्थों को ही नहीं बताते, सूक्ष्म अनुभूतियों एवं पौराणिक धाराओं को भी प्रदर्शित करते हैं। ये चित्र भंगिमाएं हैं विस्मय, क्षोभ एवं आनंद की उन प्रतिक्रियायों

की, जो प्रकृति एवं समाज के संपर्क से मिथिला के स्त्री-पुरुषों के अंतस्तल में प्रदीप्त होती है। ये चित्र एक ऐसे सामाजिक जीवन के अंग हैं जिसमें गृहकृत्य और गृहत्सवों की कक्षा (orbit) में , व्यक्ति उपग्रहों की भाँति घूमते रहते हैं। पर अब सामाजिक जीवन में परिवर्तन हो रहा है। संयुक्त परिवार कम हो गए हैं। परिणामस्वरूप गृह-जीवन में रमी हुई रसप्रवाहिनी आनंदप्रदायिनी कला भी निर्जीव हो चली है। नये सामाजिक विधान में यह निष्प्रयोजनीय लगने लगी है। फिर भी मिथिला के गृह-जीवन के कई पहलू नये समाज में भी शामिल किये जा सकते हैं, उन्हें बहुरंगी सज्जा एवं विविध स्वरपूर्ण वाणी से समृद्ध किए जा सकते हैं। ये लोकचित्रकला अब विद्यालयों एवं क्लबों में साधना एवं मनोरंजन के साधन हैं। शिक्षा केंद्रों को ही अब वर्तमान युग के गृह-देवता के निवास के रूप में देखा जा सकता है। विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल कर इन्हें जीवित रखा जा सकता है। मिथिला की लोकसंस्कृति सहजज्ञान, मूलवासनाओं, भय और उल्लास का प्रकटीकरण होने के साथ-साथ सनातन काल से प्रवाहित ज्ञानधाराओं, मध्ययुग में उत्कर्ष प्राप्त कलाओं और साहित्य-समुच्चय तथा विधि, नियम तथा कर्मकांडों में निबद्ध जीवनचर्या इत्यादि से अनुप्राणित एवं सुसज्जित भी है। हर अरिपन का विशेष महत्व है। मिथिला की महिलाओं ने अरिपन के माध्यम से मैथिल जीवन-शैली, शास्त्र-ज्ञान एवं तंत्र-ज्ञान को जीवंत बनाए रखा है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि अरिपन मिथिला की महिलाओं के लिए शास्त्रज्ञान एवं अध्यात्म-प्रेरणा के माध्यम रहे हैं।

संदर्भ:

---

1 शर्मा, रीता, 2009, बिहार की कला परम्परा, नयी किताब, पृ. 84
2 वही, पृ. 51
3 Baral Bidhudutta (2015-07-09). 'Introduction". D'Source. Retrieved 2020-12-28.
4 शर्मा, रीता, 2009, बिहार की कला परम्परा, नयी किताब, पृ. 84
5 झा, लक्ष्मीनाथ, मिथिला की सांस्कृतिक लोकचित्रकला, ज्ञानपीठ प्राइवेट लिमिटेड, पृ. 17
6 वही
7 वही, पृ. 19
8 वही
9 वही, पृ. 20
10 वही, पृ. 1
11 वही, पृ. 48

12 वही, पृ. 64
13 वही, पृ. 77
14 वही

सहायक ग्रंथ

1. **Anand, Mulk Raj, 1984, Madhubani Painting, Publications Division**
2. **Diwakar, R.R., 1959, Bihar Through the Ages, K. P. Jayasawal Research Institute, Patna**
3. **Pandey, Dhiraj, 2014-15, Excellent Books, Delhi**
4. दास, प्रमोदानंद एवं कुमार अमरेंद्र, 2008, बिहार इतिहास एवं संस्कृति, लुसेंट प्रकाशन, पटना
5. मिश्र, ताराकांत, 1985, मैथिली लोक साहित्य का अध्ययन, जानकी प्रकाशन, दिल्ली
6. झा, लक्ष्मीनाथ, मिथिला की सांस्कृतिक लोकचित्रकला, ज्ञानपीठ प्राइवेट लिमिटेड, पटना
7. शर्मा, रीता,2009, बिहार की कला परम्परा, नयी किताब, दिल्ली
8. श्रीवास्तव, लक्ष्मी प्रसाद, 1990, बिहार लोक संस्कृति कोश (मिथिला खंड), सीताराम प्रकाशन, दरभंगा
9. **Kumar, Ajeet, "Sacred Pluralities: Religion, cults, and tantric practices in medieval Mithila, *International Journal of History*, 5(2), 2023, pp. 141-146**
10. **Mishra, Kailash Kumar, "Mithila Paintings: Women's Creativity Under Changing Perspectives". *Indian Folklore Research Journal*, Vol. 1, No. 3, 2003, pp. 93-103**
11. **Wikipedia as on 25.04.2026**

Copyright & License:
© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.